About Didi Manmohini In Hindi:

दीदी मनमोहिनी जी का दैहिक जन्म हैदराबाद (सिन्ध) के एक जाने-माने धनाढय़ कुल में हुआ था अतः उन्हें धन से प्राप्त होने वाले सभी सांसारिक सुख उपलब्ध थे किन्तु वे मानसिक रूप से असन्तुष्ट थीं। उसका एक कारण यह था कि उनकी लौकिक माता, युवावस्था में ही पति के देहत्याग के कारण बहुत अशान्त रहती थीं। वे स्वयं अपने अनुभव से भी जानती थीं कि इस संसार में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसे सर्वा‘ाrण एवं स्थायी सुख था शान्ति प्राप्त हो।

गीता और भागवत के प्रति विशेष प्रेम

दीदी मनमोहिनी जी को बाल्यावस्था से ही सत्संग में रुचि तथा गीता से विशेष प्रेम था। वे श्रीमद्भागवत भी पढ़ा और सुना करती थीं। भागवत में गोपियों के प्रसंग में यह पढ़कर कि वे भगवान के प्रेम में अपनी सुध-बुध खो बैठती थीं। दीदी के मन में यह भाव उत्प होता था कि मेरे लौकिक पिता ने नाम तो मेरा गोपी रखा है परन्तु काश! श्रीमद्भागवत में जिन गोपियों का वर्णन है,मैं भी उनमें से एक होती! श्रीमद्भगवद्गीता की जो प्रति वे पढ़ा करती थीं उसमें गीता के महात्य वर्णन में लिखा था कि प्राचीन काल में अमुक व्यक्ति जब गीता सुनाया करते थे तो उनके सुनाने के स्थान के ार के सामने से गुजरता हुआ कोई भी व्यक्ति वहाँ रुके बिना नहीं रह सकता था। हर पथिक एक चु बक के आक ऊण की न्याई आध्यात्मिक आक ऊण से खचा हुआ वहाँ खड़ा हो जाता; वह आव यक काम होने पर भी उस गीता सुनने के चाव को न मिटा सकता। इस को पढ़कर दीदी जी के मन में विचार आता था कि क्या मेरे जीवनकाल में मुझे कोई ऐसा गीता सुनाने वाला मिलेगा? उनकी ये कामनायें और भावनायें शुभ और शीलयुक्त थीं और आख़िर उनके पूर्ण होने का समय आ गया।

जिस सच्चे गीता-ज्ञानदाता की उन्हें खोज थी,वह उन्हें मिल गया

उनकी लौकिक माता जी को किसी ने बताया कि दादा लेखराज प्रतिदिन अपने निवास स्थान पर ऐसी प्रभावशाली एवं मधुर रीति से गीता सुनाते हैं कि बस, मन उसी में रम जाता है और जीवन-विधि अथवा संस्कारों में परिवर्तन के शुभ लक्षण प्रगट होने लगते हैं। दीदी जी की लौकिक माता वहाँ ज्ञान सुनने गयी। पति के देहान्त के कारण उनके मन में वैराग्य तो था ही, अतः अब उन्हें ज्ञान की सुगंधि, प्रभु-स्मृति का आधार, एक उच्च्य लक्ष्य के लिए पुरुषार्थ करने की राह तथा उससे होने वाला ह ऊ एवं आनन्द भी प्राप्त हुआ। इसके बाद, शीघ्र ही दीदी जी भी, जिनका लौकिक नाम गोपी था, गीताज्ञान की यास और प्रभु-मिलन की आश लिये वहाँ गयीं। वहाँ उन्होंने देखा कि दादा लेखराज, जिनका बाद में दिव्य नाम, ब्रह्मा बाबा अथवा ‘प्रजापिता ब्रह्मा प्रसिद्ध हुआ, के मुख-मण्डल से पवित्रता का तेज और रूहानियत से प्राप्त होने वाली शान्ति की कान्ति तथा दिव्यता की चाँदनी बरस रही थी। उनकी वाणी में एक अ तीय मिठास, ओज और रस था जिससे सुनने वालों के मन को जहाँ शान्ति मिलती थी, वहीं उनमें एक क्रान्ति भी आती थी। बाबा की वाणी सुनने वाले पर ऐसा असर पड़ता था कि जो मनोविकार पहले उसे अपनी बेड़ियों में जकड़े हुए थे, वह उन्हें तोड़ फेंकने के लिए केवल कृत संकल्प ही नहीं होता था बल्कि ज्ञान और योग की हथौड़ी और छेनी से चूर-चूर कर देता था। दीदी जी भी उससे प्रभावित हुए बिना न रह सकीं। उन्हें ऐसा लगा कि जिस सच्चे गीता-ज्ञानदाता की उन्हें खोज थी, अब वह उन्हें मिल गया है। अतः बाबा ने अपने प्रवचनों में, जिन्हें अलौकिक भाषा में ‘मुरली’ कहा जाता है, पूर्ण पवित्रता का व‘त लेने के लिए जो घोषणा की, उसके उत्तर में, दीदी जी ने अन्य अनेकों की तरह इस महान् व्रत को सहर्ष स्वीकार किया। उन्होंने यह मन में ठान लिया कि ब्रह्मचर्य व्रत के पालन के लिए वे सारे संसार का सामना करने के लिए, सिर पर पहाड़ ढह जाने की तरह कष्टों का और सब प्रकार की कठिनाइयों का सामना करेंगी। यहाँ तक कि यदि उनका शरीर भी चला जाये तो वे उसकी भी बलि देंगी परन्तु वे इस व्रत से नहीं टलेंगी, नहीं टलेंगी।

संघर्ष और संग्राम का सामना

दीदी के पवित्रता के महाव‘त के कारण उनका कड़ा विरोध हुआ। उनके निकटतम सम्बन्धियों ने इस सत्संग एवं संगठन का हर प्रकार से कड़ा विरोध भी किया और दीदी जी पर कई प्रकार से बन्धन लगाये गये परन्तु यह उनकी वीरता, उनके संकल्प की दृढ़ता, उनके नि चय की अचलता और उनके पुरुषार्थ की तीव्रता का द्योतक है कि आज से लगभग 70 वर्ष पहले के जमाने में, जब हिन्दू समाज में नारी अत्यन्त अबला स्थिति में होती थी, तब भी एक ँचे आदर्श को सामने रखकर उन्होंने सब विरोध सहन किये परन्तु प्रभु-प्रेम से और पवित्रता के नियम से वे एक पल भी पीछे नहीं हटीं। हम भारत देश की वीरा‘नाओं की वीर-गाथायें पढ़ते हैं और झाँसी की रानी जैसी सेनानियों के निर्भीक संग्राम के

ऐतिहासिक छन्दबद्ध उल्लेख भी पढ़ते हैं परन्तु दीदी जी के आध्यात्मिक संग्राम की गाथा वीरता के दृष्टिकोण से किसी से भी कम नहीं है।

ईश्वरीय विश्व विद्यालय में प्रारम्भ से ही एक मुख्य सेवाधारी

सन् 1937 में जब बाबा ने इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय की स्थापना की और उसके लिए कन्याओं-म ाताओं का एक ट्रस्ट बनाया और अपनी सारी चल एवं अचल सम्पत्ति उन कन्याओं-माताओं को समर्पित की, तब दीदी मनमोहिनी जी भी उस ट्रस्ट की एक विशेष सदस्या थीं। तब से ही बाबा ने उन्हें कन्याओं-माताओं के विभाग से सम्बन्धित अनेक काया के लिए जम्मेवार ठहराया था और वे यज्ञमाता सरस्वती जी की विशेष परामर्शक भी नियुक्त की गयी थीं क्योंकि उनमें तदानुकूल प्रतिभा थी।

प्रशासन अभियन्ता

देश-विभाजन के बाद,सन् 1951 में इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय को सिन्ध से स्थानान्तरित करने के लिए व्यवस्था करनी थी, तब बाबा ने दीदी जी को ही इस कार्य के लिए भेजा था। दीदी जी ने ही पूछताछ करते-करते इसके लिए माउण्ट आबू को चुना था।

ज्ञानमूर्ति, गुणमूर्ति, योगमूर्ति और वात्सल्यमूर्ति

इतना ही नहीं, दीदी में अनेकानेक गुण थे। सबसे पहली बात तो यह है कि वे एक नियमित विद्यार्थी थीं। सन् 1937 से लेकर सन् 19 3 की वेला तक शायद ही कभी वे बाबा की ज्ञान-मुरली के वण अथवा संगठित ज्ञान-अध्ययन (क्लास) में अनुपस्थित हुई होंगी। सभी ने उन्हें नित्य प्रातः नोटबुक व पैन का, क्लास में प्रयोग करते हुए देखा था। वे सुनते समय कुछ ज्ञान-बिन्दुओं को लिख डालतीं और बाद में दिनभर में मिलने वाले ज्ञान-अभिलाषियों को सुनाती रहतीं। इस प्रकार 72 वर्ष की आयु में भी वे एक नित्य नियमित विद्यार्थी थीं। जितना ही वे ज्ञानोपार्जन में तत्पर थीं, उतना ही वे योगाभ्यास में भी तीव' वेगी थीं। वे नित्य प्रातः स्नान कर चार बजे सामूहिक योग में न केवल उपस्थित होतीं बल्कि अधिकतर मौन अभ्यास में सबके सम्मुख योगमूर्ति के रूप में योग सचेतक होतीं।

संस्कार परिवर्तन की सेवा में दक्ष

इसके अतिरिक्त वे एक स्नेहमयी आध्यात्मिक वरिष्ठ शिक्षिका भी थीं। दूसरों को ज्ञान, गुण और योग के मार्ग पर लाने का उनका तरी?का निराला था। वे प्रेम के प्रभाव से सम्पर्क में आने वालों के जीवन में सहज परिवर्तन लाने में दक्ष थीं। कोई उनसे मिलने आता, वे ईश्वरीय विश्व विद्यायल की ओर से छपी एक डायरी जिसमें ज्ञान और योग से सम्बन्धित कुछ चित्र भी होते और हर पृष्ठ पर कोई महावाक्य भी उन्हें भेंट के रूप में देतीं। जब वह ले लेता, तब उसे कहतीं "इसका कोई भी पृष्ठ खोलिये"। वह एक बच्चे की न्याई, माँ के जैसा दुलार पाकर, हँसता-मुस्कराता डायरी का कोई प ा खोल देता। तब वे कहतीं, "पढ़ो, इसमें क्या लिखा है"। वह उसे झूमते-झूमते प्रेम-निमग्न होकर पढ़ लेता। तब दीदी कहतीं "यह है तुम्हारे लिए ग'ंथ साहब का वचन। ठीक है ?" वह उत्तर देता, "जी हाँ, यह तो बहुत अच्छा है। यह महावाक्य तो मेरे लिए है; यह तो अच्छी डायरी है।" दीदी जी प्रत्युत्तर में कहतीं "अच्छी लगती है ना; इसे धारण करना। यह शिव बाबा की तर?फ से आपके लिए सौ?गात है। प्रतिदिन एक पाठ खोल लेना और उस शिक्षा को धारण करने का पुरुषार्थ करना और फिर रात्रि को इसमें अपनी अवस्था का चार्ट लिखना; फिर देखना, जीवन में कितना परिवर्तन आता है। सच कहती हूँ, बहुत आनन्द आयेगा क्योंकि ये ईश्वरीय महावाक्य हैं।" इस प्रकार उनकी सौ?गात जीवन को लोहे से सोना बना देती और वह भी सुगंधित। गोया वे प्रेम और ईश्वरीय नियम की ओर मनुष्य का जीवन मोड़ देती। वास्तव में देखा जाय तो दूसरों पर उनके कहने का प्रभाव इसलिए पड़ता था क्योंकि वे पहले स्वयं उसे अपने जीवन में लाती थीं।

परखने की शक्तिशाली शक्ति

दीदी जी में किसी व्यक्ति को परखने की शक्ति बड़ी शक्तिशाली थी। जैसे, धन्वन्तरी (वैद्य), व्यक्ति की नब्ज से उसके रोग को जान लेता था, वैसे ही सम्पर्क में आने वाले व्यक्ति को दीदी जी चेहरे, हाव-भाव अथवा अल्प वार्ता से तुरन्त ही जानकर उसकी आध्यात्मिक समस्या का निदान कर देती थीं और उसे ठीक हल सुझाती थीं। अपनी इस विशेषता के कारण उन्होंने सैकड़ों, ह?जारों व्यक्तियों को पवित्रता एवं योग के मार्ग पर मार्गदर्शन दिया, आगे बढ़ाया, उनका काया

पलट किया और उन्हें ऐसा प्रेरित किया कि अनेकानेक कन्याओं एवं माताओं ने अपना जीवन ईश्वरीय सेवार्थ अथवा लोक-कल्याणार्थ समर्पित कर दिया।

एक कुशल पत्र-लेखिका

वे एक कुशल पत्र-लेखिका भी थीं। संक्षेप में ही पत्र एवं पत्रोत्तर द्वारा 'सोये हुओं' को 'जगा' देतीं अथवा माया से घायल हुए मन को राहत देकर पुनरुज्जीवन (ठशर्क्षी शपरींळेप) देने का महान् कार्य करतीं।

अथक सेवाधारी

वे प्रारम्भ से ही कर्मठ थीं, उन्होंने इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय में अथक होकर सेवा की और अपना तन-मन-धन पूर्ण रूपेण जन-जागृति में लगा दिया। वृद्धावस्था में भी उन्होंने ईश्वरीय सेवार्थ आसाम से आबू तक, काश्मीर से कन्याकुमारी तक और कोलकाता से कच्छ तक देश का भ्रमण किया। इतना ही नहीं, विदेश में भी वे इस श्रेष्ठ कर्त्तव्य के लिए गयीं। अपनी 72 वर्ष की आयु में भी वे मधुबन में पधारे हुए ह?जारों आगन्तुकों को सुख-सुविधा देने तथा ज्ञान की गहराई में ले जाने और मातृवत् वात्सल्य से सींचने में दिन-रात लगी रहतीं। मन की सच्चाई-स?फाई तथा अमृतवेले याद की यात्रा पर ?जोर दीदी जी प्रारम्भ से ही बाह्य स्वच्छता और मन की सफाई-सच्चाई तथा स्वावलम्बी जीवन पर विशेष बल देती थीं। वे ईश्वरीय मार्ग पर सद्गुरु परमात्मा शिव की शिक्षाओं के प्रति फरमानबरदार और वफादार बने रहने के लिए ही हमेशा सीख देती थीं। नित्य ब्रह्ममुहूर्त (अमृतवेले) उठकर ईश्वरीय याद रूपी यात्रा करने की ताकीद करती थीं। इस प्रकार नियम पूर्वक दिनचर्या का पालन करने के लिए वे विशेष ध्यान दिलातीं।

अतिरिक्त मुख्य प्रशासिका का कर्त्तव्य कर सेवाकेद्रों में वृद्धि

अपनी कुशाग्र बुद्धि, व्यक्तियों की परख, प्रेम, मर्यादा पालन, नियमित विद्यार्थी जीवन तथा अथक सेवा के कारण वे एक कुशल प्रशासिका भी थीं। इसलिए सन् 1951-52 से लेकर (जब से ईश्वरीय सेवा प्रारम्भ हुई) सन् 1961 तक वे कण्ट्रोलर अथवा प्रशासन-अभियन्ता एवं नियंत्रक नियुक्त थीं और जनवरी सन् 1969 में प्रजापिता ब्रह्मा के अव्यक्त होने के बाद इसकी मुख्य प्रशासिका दादी प्रकाशमणि जी के साथ अतिरिक्त प्रशासिका के तौर पर सेवारत थीं। यह एक बहुत महत्त्वपूर्ण बात है कि 14 वर्षों तक दादी और दीदी दोनों ने मिलकर इस प्रकार प्रशासन कार्य किया कि कभी उनमें मन-मुटाव नहीं हुआ, न कभी उन्होंने एक-दूसरे की आलोचना की। वे कहा भी करतीं कि हम दोनों के शरीर अलग-अलग हैं परन्तु आत्मा एक है। उनके इस मंतव्य और घनिष्ठ स्नेह को देखकर लोग दंग रह जाते, इन दोनों के कुशल प्रशासन में, परमपिता परमात्मा शिव के प्रशिक्षण एवं संरक्षण में ईश्वरीय विश्व विद्यालय ने दिन दुगुनी और रात चौगुनी उन्नति की जिसके फलस्वरूप, सन् 1983 से पहले ही इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय के विश्वभर में लगभग 1150 सेवाकेद्र और उपसेवाकेद्र थे।

दीदी जी कुछ वर्षों से ईश्वरीय याद रूपी यात्रा की रफ्तार तेज करने के लिए कहती थीं और अपने हर प्रवचन में यह जरूर जताती थीं कि 'अब घर (परमधाम) जाना है'। इसलिए वे पुरानी बातों को भलूकर हल्का होने, दूसरों के अवगुण न देख, गुण देखने और नित्य निरन्तर श्रीमत के अनुसार चलने की बात जरूर कहती थीं।

अपने देहत्याग से कुछ समय पहले जब वे थोड़ी अस्वस्थ थीं तो शिव बाबा ने कहा था कि वे 'पलंग पर नहीं बल्कि प्लैनिंग (झश्ररपपळपस) में हैं और भोगना में नहीं बल्कि योजना में हैं।' शिव बाबा इससे अधिक और स्पष्ट बता ही कैसे सकते थे ? शिव बाबा ने यह भी बताया है कि अब जो सतयुगी पवित्र योगबल वाली सृष्टि की नींव पड़ेगी, उसमें वे प्राथमिक पार्ट अदा करेंगी। अतः यद्यपि इस ईश्वरीय विश्व विद्यालय के हरेक विद्यार्थी किंवा बहन और भाई का उनसे अमिट स्नेह था और है, फिर भी उन्होंने दीदी जी के अनुपम आध्यात्मिक उत्कर्ष को देखकर और उनके सराहनीय उज्ज्वल भविष्य को जानकर देहत्याग के इस वृत्तान्त को, शोक का अवसर नहीं माना बल्कि योग का अवसर मानते हुए पुरुषार्थ को और तीव' करने की प्रेरणा ली।

प्रशासनिक कुशलता

दीदी जी के जीवन में अनेक दिव्यगुण अपने चरम उत्कर्ष पर थे। वे बहत्तर वर्ष की आयु में भी आश्चर्य-चकित कर देने वाली स्फूर्ति और चेतना के साथ काम करती थीं। मधुबन में देश के कोने-कोने से तथा विदेशों से, हजारों व्यक्ति आते थे

तो उनका कार्य-उत्तरदायित्व इतना बढ़ जाता था कि एक अच्छे युवक या युवती के लिए भी संभालना कठिन था परन्तु उन्होंने एक तो सारी व्यवस्था को दादी जी के साथ मिलकर ऐसा बना रखा था कि कार्य सुचारू रूप से, झंझट और झड़प के बिना चलता रहता था और दूसरे वे स्वयं कार्य-प्रवाह से परिचित एवं सूचित रहती थीं तथा ध्यान देती थीं।प्रातः ही वे सारे मधुबन का एक बार भ्रमण कर लेती थीं और भण्डारे आदि-आदि में, जहाँ-कहीं भी उनके परामर्श की आवश्यकता हो, वे राय दे आती थीं। उनकी कार्य लेने की विधि भी ऐसी थी कि सभी उनसे सन्तुष्ट रहते थे। वे उनकी कठिनाइयों को भाँप कर उन्हें वाञ्छित हल देती थीं और उनमें कठिनाइयों को पार करने के लिए प्रेरणा भरती थीं। यही कारण है कि मधुबन में जो भी वरिष्ठ सरकारी अधिकारी आते या बड़े उद्योगों के व्यवस्थापक आते, वे दीदी जी तथा दादी जी दोनों से मिलते समय यह अवश्य कहते कि यहाँ की व्यवस्था देखकर उन्हें बहुत अच्छा लगा है। न कोई कोलाहल, न आहट, न तनाव, न कार्य का ठहराव। शान्ति, परस्पर प्रेम तथा सेवाभाव से सुचारू कार्य देखकर सभी कहते थे कि प्रशासन (अवाळपळीींरींळेप) सीखना हो तो इनसे सीखना चाहिए। ?फरवरी, 1983 में मधुबन में बड़ा सम्मेलन हुआ, तब दादी प्रकाशमणि जी और दीदी मनमोहिनी जी के संरक्षण में तीन हजार व्यक्तियों के ठहरने, भोजन करने तथा सब प्रकार की सहूलियतें मिलने का और साथ-साथ सम्मेलन तथा योगादि का कार्य ऐसा शान्तिपूर्ण चला कि अन्तर्राष्ट्रीय ‘याति के लोगों ने भी इसकी प्रशंसा की। इसी प्रकार, इतने बड़े ॐ-शान्ति भवन के इतने अल्पकाल में निर्माण होने की बात भी सभी के लिए एक मधुर आश्चर्य बन गया। वास्तव में, यह दोनों के मधुर व्यक्तित्व एवं प्रशासन-कुशलता का प्रभाव ही था कि सभी ने तन-मन-धन से सहयोग देकर इतने बड़े कार्य को सहज ही सफलता से पूरा कर लिया और वह भी योगयुक्त अवस्था एवं शान्ति से।

त्यागमय जीवन

दीदी जी यद्यपि एक बहुत ही धनवान घराने में पैदा हुई थीं तथापि यज्ञ में उनकी वेष-भूषा, खान-पान तथा रहन-सहन अन्य सभी की तरह अत्यन्त सादा और साधारण था। उन्होंने कभी भी अपने लौकिक कुल के धन-धान्य के बारे में गर्व नहीं किया। उन्होंने अपने लौकिक जीवन के सुखों को कभी भी याद नहीं किया। इस प्रकार, वे सादगी और त्याग की मूर्ति थीं। उनके पास जो चीजें होतीं, वे दूसरों को ही सौगात देकर प्रभु-प्रेम में बाँधतीं। उन वस्तुओं को वे अपने लिए प्रयोग नहीं करती थीं।

नम्रचित्त

दीदी मनमोहिनी जी, दादी प्रकाशमणि जी के साथ मिलकर एक बहुत बड़ी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का कार्य-संचालन करती थीं। अतः उत्तरदायित्व के साथ उन्हें का?फी अधिकार भी प्राप्त थे। परन्तु उन्होंने कभी भी किसी से अधिकार या सत्ता के मद (अहंकार) में नहीं बोला। बल्कि यदि कभी किसी ने मार्यादानुसार व्यवहार नहीं किया, तब भी उन्होंने उसे मातृवत् प्रेम ही दिया ताकि वह ईश्वरीय ज्ञान के मार्ग से पीछे न हट जाय। यदि कभी कोई किसी कारण से रुष्ट भी हो गया तो भी उन्होंने स्वयं झुककर उसे स्नेह और सौहार्द्र से सींचा ताकि शिव बाबा के साथ उस आत्मा का बुद्धियोग बना रहे और वह देहधारी आत्माओं से रूठकर कहीं योगमार्ग से विचलित न हो जाये। उन्होंने कभी यह हठ नहीं किया कि “गलती अमुक व्यक्ति की ही है, अथवा दोष उसी का ही है और इसलिए मैं उससे क्यों बात करूँ ?” बल्कि स्वयं दीदी जी ने ही उसके मन को शीतल करने के लिए कहा कि “भाई, मन में कोई बात हो तो निकाल दो; हम सभी एक मार्ग के राही हैं। दैवी परिवार में आत्मिक सम्बन्धी हैं और हमारे मन में आपके लिए शुभ भाव ही है।” इस प्रसंग में यह कहना उचित होगा कि दीदी जी को बच्चों का यह गीत “हम हैं आत्मा, तुम हो आत्मा, आपस में भाई-भाई, बाबा कहते पढ़ो पढ़ाई; नहीं किसी से लड़ो लड़ाई”, अच्छा लगता था।

स्नेहमय व्यक्तित्व

दीदी जी की यह एक विशेषता थी कि वे सम्पर्क में आये व्यक्ति को स्नेह से अपना बना लेती थीं। वे किसी को माँ-जैसा प्यार देकर या किसी को उसकी समस्या का हल देकर स्नेह के सूत्र में बाँध कर, उससे कोई-न-कोई बुराई छुड़वा देतीं। जो बात वह व्यक्ति अन्य किसी से नहीं मानता था, दीदी जी उसे सहज ही मनवा देतीं। इस प्रकार, उनके व्यक्तित्व में एक चुम्बकीय आकर्षण था। उनसे बात करने में किसी को भी भय महसूस नहीं होता था बल्कि उनके स्नेह के स्पन्दनों से, उनकी ओर खिंच जाता था और दीदी जी उसे आध्यात्मिक पथ पर आगे बढ़ा देती थीं। उनके सम्पर्क में आते रहने वाला व्यक्ति प्रायः ज्ञान-विमुख नहीं होता था। जिस डाक्टर (डा. भगवती) ने दीदी जी का आपरेशन किया, स्वयं वह

दीदी जी को माँ मानने लगा था। यद्यपि दीदी जी का स्नेहशील व्यक्तित्व था परन्तु वे अपनी स्थिति को उपराम भी उतना ही बनाये रखती थीं। जब वे किसी को कुछ टोली (प्रसाद) खाने के लिए देती थीं तो पूछती थीं कि “शिव बाबा की याद में रहकर खाया है या नहीं ?”

विनोद-प्रिय

दीदी जी केवल तपस्यामूर्त ही नहीं, बल्कि विनोद-प्रिय भी थीं। वे चुटकले सुनती और सुनाती थीं परन्तु वे चुटकले भी शालीन और अलौकिकता की ओर ले जाने वाले होते थे। वे शुष्क स्वभाव की नहीं थीं बल्कि इतनी आयु होने पर भी बाल-स्वभाव की तरह सरल और हास्य-प्रिय थीं।

निद्राजीत

जो लोग भी दीदी जी के सम्पर्क में आये हैं, वे जानते हैं कि दीदी जी सोती बहुत कम थीं। वे रात्रि को निद्रा त्याग कर भी कुछ समय व्यक्तिगत रूप से योगाभ्यास करती थीं। वे प्रातः कभी दो बजे भी उठ जातीं, अव्यक्त बापदादा के प्रोग्राम में काफी समय बैठी रहतीं और वैसे भी “ईश्वरीय याद रूपी यात्रा” पर विशेष ध्यान देतीं। उस तपस्या का ही यह फल है कि वे ज्ञान एवं योग की दौड़ में विन (थळप;विजय) और वन (जपश;प्रथम) की सूची में आ गयीं।

आत्म-निश्चय की अभ्यासी

वे सभी को आत्मिक स्थिति और ईश्वरीय स्मृति के अभ्यास की टेव डालती थीं। यदि कोई व्यक्ति बीमार होता और लोग उससे, बीमारी की बार-बार अधिक चर्चा करते तो वे उन्हें कहतीं कि इसे देह की अधिक याद न दिलाओ। वे उस व्यक्ति को भी कहतीं कि “शिव बाबा की स्मृति में रहोगे तो तन के कष्ट मिट जायेंगे।” स्वयं भी जब वे अस्पताल में थीं तो ईश्वरीय स्मृति में ही थीं और डॉक्टर को कहती थीं कि तन को कुछ होगा परन्तु मन ठीक है। अस्पताल में नर्सों को उनसे विशेष स्नेह हो गया था। दीदी जी ने उन्हें भी शिव बाबा का संक्षिप्त परिचय दिया था। जो कोई भी आता था, दीदी जी उसे “ओम् शान्ति ! शिव बाबा याद है ?” यह कहा करती थीं। अस्पताल के कर्मचारी भी कहते थे कि अब यह अस्पताल भी सत्संग भवन अथवा आश्रम बन गया है। दीदी जी अपने कर्म से वातावरण को आध्यात्मिक बना देती थीं। उनकी योगदृष्टि बहुत बलशाली और शिक्षा प्रभावशाली थी।